Reg No 177/2008-2009 ISSN: 2322–0317

# PSSH PERSPECTIVE of SOCIAL SCIENCES and HUMANITIES

An International Multidisciplinary Refereed Research Journal

VOL 2, NO 2

JULY - DECEMBER 201

Biannual

Editor

*Dr Hemant Kumar Singh*

Assistant Professor

Economics Department

Madan Mohan Malviya PG College

Deoria (UP)

Publisher

*Herambh Welfare Society*

Varanasi (India)

# मूल्यों की परंपरा और वैदिक साहित्य

डॉ. महेन्द्र प्रताप सिंह

साहित्य मूल्याभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम रहा है। साहित्य के प्राचीनतम रूप ऋग्वेद में विभिन्न मूल्यों की अभिव्यक्ति मिलती है। ऋग्वेद में देवताओं की स्तुतियों से संबंधित मंत्रों में सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक, नैतिक तथा सांस्कृतिक धारणाओं की अभिव्यक्ति हुई है। सामाजिक क्षेत्रों में परिवार, विवाह–प्रथा, नारी, गार्हस्थ्य, खान–पान, रहन–सहन आदि के विषय में विशिष्ट मान्यताओं का उल्लेख हुआ है।

वैदिक साहित्य में कृषि कार्य, पशुपालन एवं व्यापार आदि के संबंध में निश्चित धारणाओं का प्रतिपादन हुआ है। राजनीतिक क्षेत्रों में राजा, प्रजा, शासन–पद्धति विषयक नियम तथा निर्देश उपलब्ध होते हैं। इसी प्रकार धर्म के संदर्भ में धर्म–पद्धति, देवता, यज्ञ–कर्म, ईश्वर–स्तुति इत्यादि के विधि–विधानों का निदर्शन हुआ है। इनके साथ–साथ यत्र–तत्र आदर्श तथा नैतिक मान्यताओं की भी अभिव्यक्ति हुई है। ये सभी धारणाएँ/मान्यताएँ, रीति–रिवाज, विधि–विधान, आदर्श आदि कालांतर में मूल्यों का स्वरूप धारण करते हैं। वस्तुतः यह कहा जा सकता है कि वैदिक साहित्य में मूल्याभिव्यक्ति का प्रारंभिक स्वरूप रहा है।

प्रत्येक काल में कुछ नए मूल्यों का उद्‌भव, ह्रास एवं विकास होता है। वैदिक काल को मूल्यों का निर्माण काल कहा जा सकता है। इस समय तक समाज के विविध क्षेत्रों से संबंधित नवीन मूल्यों का निर्माण हो चुका था। वैदिक–साहित्य से प्रमाणित होता है कि मानव–जीवन कृषि–युग के विकास की स्थिति में था। कबीलों और ग्रामों का निर्माण होने लगा था। पारिवारिक जीवन स्थायित्व ग्रहण कर चुका था। संयुक्त परिवार के सोपान दृढ़ हो चुके थे। समाज में प्रचलित विविध उद्योग धंधों का उल्लेख वैदिक साहित्य में है। ऐसे समय में मनीषियों ने जीवन के विविध क्षेत्रों पर विस्तार से विचार कर अपनी मान्यताएँ व्यक्त कीं।

प्राकृतिक शक्तियों की पूजा आरंभ हो चुकी थी। विश्व–सृष्टि के संचालन की पृष्ठभूमि में एक अज्ञात सत्ता 'ईश्वर' की भी परिकल्पना की गई। वैदिक साहित्य इस मान्यता का प्रमाण है। सामाजिक जीवन से संबंधित जिन मान्यताओं एवं धारणाओं का उल्लेख वैदिक साहित्य में हुआ है वे सभी कालान्तर में मूल्य बन गए। सहस्रों वर्षों से ये मूल्य समाज में अपना अस्तित्व बनाए हुए आज भी जीवित हैं। इनमें से कुछ का स्वरूप समय एवं परिस्थितियों के आघात से परिवर्तित हो गया है। साथ ही अनेक नवीन मूल्यों का निर्माण भी हुआ है। वेद, ब्राह्मण–ग्रंथ, पुराण, उपनिषद् आदि में सामाजिक, धार्मिक

और नैतिक जीवन से संबंधित आख्यान मिलते हैं, जो तत्सामयिक जीवन मूल्यों के परिचायक हैं।

वैदिक समाज में कृषि के प्रति आदर भाव, मूल्य का स्वरूप धारण कर चुका था। उदाहरण के लिए ऋग्वेद का **कितव–सूक्त** लिया जा सकता है – ''खेती करो। इस प्रकार से प्राप्त धन से संतुष्ट रहो, उसे पर्याप्त समझो।''[1] द्यूत के प्रति अनादर एवं 'उत्तम खेती' आदि कहावत में कृषि का महत्त्व आज भी समाज में विद्यमान है। वैदिक समाज में पशुपालन जीवन–निर्वाह का प्रधान साधन था। अतएव 'गौ' ;जो कृषि बल समाज का प्रधान उपादान हैद्ध को इस समाज में विशेष महत्त्व प्राप्त था। ऋग्वेद में पूषा से प्रार्थना करते हुए कहा गया है कि 'हे पूषा! किसी पशु को गुम न होने दो, किसी को क्षत न होने दो, किसी को गड्ढे में गिरने से अस्थि–भंग का कष्ट न हो, इस प्रकार अक्षत गौओं के साथ लौटो।''[2] गोधन के प्रति यह धारणा आज भी भारतीय ग्रामों में विद्यमान है।

ऋग्वेद में स्वस्थ संतानोत्पत्ति एवं धन की कामना करते हुए मरुत से प्रार्थना की गई है ''हे मरुत हमें शक्तिमान श्रेष्ठ वीरों से समन्वित वैभव प्रदान करो।''[3] ऐतरेय ब्राह्मण में पुत्र की भव्य प्रशंसा करते हुए उसे निंदा के अयोग्य और स्वर्गलोक का प्रतीक माना गया है ;स वै लोकोव दावदःद्ध। 'ज्योतिर्ह पुत्रः परमे व्योमन', 'न पुत्रास्य लोकोस्तीति' आदि श्रुति वाक्यों से प्रमाणित होता है कि पुत्र संबंधी धारणा मूल्य का रूप ग्रहण कर चुकी थी जो आज के भारतीय समाज में विद्यमान है।

आर्यों में द्यूत अति प्रिय व्यसन था। यद्यपि इसे बुरा कहा गया है तथापि खेलते समय द्यूतकर अपनी प्रिय पत्नी को भी दाव पर लगा देते थे – ''उसने ;पत्नीद्ध कभी मेरे से कलह नहीं किया, वह कभी रुष्ट नहीं हुई। वह मेरे मित्रों तथा मेरे प्रति कृपालु थी। यदि मैंने पतिव्रता पत्नी को परे धकेल दिया है तो इसका कारण तोंक का दाव है।''[4] वैदिक साहित्य में नारी के लिए पातिव्रत धर्म का पालन मंगलमय माना जाता था। शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है कि जो स्त्री एक की होते हुए दूसरे की संगति करती है वह पाप करती है। ;वरुण्यं वा एतत् स्त्री करोति यदन्यस्य सती अन्येन चरितद्ध।

तत्कालीन समाज में प्रचलित स्त्री संबंधी मूल्यों की अभिव्यक्ति वैदिक साहित्य में हुई है। यज्ञ में पत्नी यजमान की सहधर्मिणी होती थी। पत्नी रहित पुरुष को यज्ञ का अधिकारी नहीं माना गया है। पत्नी को पुरुष की अर्धांगिनी स्वीकार किया गया है। वैदिक युग में यज्ञ–संपादन धर्म का मुख्य अंग था। अतः ऋग्वेद एवं ब्राह्मण ग्रंथों में यज्ञानुष्ठान का विस्तार से वर्णन किया गया है। अनेक प्रकार के विधि–विधानों का निर्देश है। यज्ञ–संबंधी मूल्यों के साथ–साथ नैतिक मूल्य भी जुड़ते चले गए। ''असत्य भाषी पुरुष

---

[1] ''अक्षौर्मा दीव्यः कृषिमित् कृषस्व वित्ते रमस्व बहु मन्यमानः।'' कितव ऋग्वेद

[2] माकिर्नेे शन्माकीं रिषन्माकीं संशरि केवटे। अथारिष्टाभिरा गहि।।'' पूषा, ऋग्वेद

[3] अस्मभ्यं तानि मरुतो वि यन्त रयिं नौ धत्त वृषणः सुवीरम्।'' मरुत, ऋग्वेद

[4] न मा मिमेथ न जिहील एषा शिवासखिभ्य उत्त मह्यमासीत् ।
अक्षस्या हमेक परस्य हेतोरनुव्रतामय जयामरोध्म् ।। कितव, ऋग्वेद

को यज्ञ के लिए अनुपयुक्त माना गया है।''[1] ऋग्वेद के दशम् मण्डल के एक सूक्त में दान की महिमा का उल्लेख मिलता है –''जो मनुष्य दान न देकर अपने अर्थ को केवल अपने स्वार्थ के लिए खर्च करता है, वह पाप को ही खाता है।''[2]

माता–पिता की इच्छा पर ही कन्या का विवाह निर्भर होता था। क्षत्रिय कन्याओं में स्वयंवर–प्रथा भी प्रचलित थी। ऋग्वेद में उस पिता की प्रसन्नता का उल्लेख मिलता है जो अपनी दुहिता के वर का प्रबन्ध कर अपने मन में बड़ा सुखी होता है। विवाह के संबंध में यह मान्यता आज भी है। सामान्यतया वैदिक आर्य एक ही विवाह करता था तथापि बहुविवाह की प्रथा भी स्पष्टतः प्रचलित थी। ''पतिं न नित्यं जनयः सनीलाः' तथा 'जनीरिव पतिरेकः समानः' आदि मंत्रों में ये मूल्य स्पष्ट हैं।

राजनीतिक मूल्यों में राजा की सत्ता का महत्त्वपूर्ण आख्यान है। उसे देवताओं से भी उँचा कहा गया है। ऐतरेय ब्राह्मण की मान्यता के अनुसार देवों ने विचार किया था कि असुरों के हाथों हमारी पराजय का यही कारण है कि हम राजा विहीन हैं। अतएव उन लोगों ने बलिष्ठ तथा औजिष्ठ इन्द्र को अपना राजा बनाया। रक्षा करना राजा का मुख्य धर्म था। रक्षा विषयक मूल्य राजतंत्र में आज तक विद्यमान हैं।

ऋग्वेद में धर्म को जीवन–यात्रा का मुख्य उपयोगी साधन स्वीकार किया गया है ''सुगा ऋतस्य पन्थाः'' साथ ही ''सत्यस्य नावः सुकृतमपीपरन्'' अर्थात् सत्य की नाव धर्मात्मा को पार लगाती है–भी कहा गया है।

यही नहीं वैदिक साहित्य में प्रेम, दया, करुणा, श्रद्धा, सेवा, कल्याण जैसे सार्वदेशिक और सार्वकालिक मूल्यों की भी अभिव्यक्ति हुई है। विश्व–शांति और विश्व–बंधुत्व की उदात्त भावना से युक्त वैदिक मंत्रों में मानव मात्रा में परस्पर सौहार्द्र, मैत्री तथा सहाय की कामना की गई है। यजुर्वेद के मंत्रों में स्पष्ट है–''मैं मित्र की दृष्टि से सब प्राणियों को देखूँ। हम लोग मित्र की दृष्टि से परस्पर में एक दूसरे को देखें।''[3] वैदिक ऋषि विश्व–कल्याण की प्रार्थना करता हुआ समष्टि के मंगल के लिए आशीर्वाद चाहता है–''हे देव सविता, समस्त पाप कर्मों को हम से दूर करो। हमारे लिए जो भद्र वस्तु–कल्याणकारी पदार्थ हो उसे हमें प्राप्त कराइये।''[4] इतना ही नहीं प्रत्येक धर्मानुष्ठान की समाप्ति पर साधक अपना आदर्श इस प्रकार से व्यक्त करता था –''इस विश्व में सब प्राणी सुखी हों, सब लोग रोग से आक्रांत न हो, सब प्राणी कल्याण की उपलब्धि करें। कोई प्राणी दुख का

---

[1] अमेध्यो वै पुरुषो यदनृतं वदति – शतपथ ब्राह्मण

[2] मोघन्मन्नं विन्दते अप्रचेताः सत्यं ब्रवीमि वध इत्स तस्य ।
नार्यं मणं पुष्यति नौ सखायं केवलाघो भवति के वलादी ।। ऋग्वेद–दानशीलता

[3] मित्रास्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे ।
मित्रास्य चक्षुषा समीक्षा महे ।।'' यजुर्वेद 36/18

[4] विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव । यद् भद्रं तन्न आसुव ।। यजुर्वेद

भाजन न हो।''[1] पुराण तथा उपनिषदों में अनेक कहानियों के माध्यम से जीवन के विविध मूल्यों की अभिव्यक्ति हुई है। ''वस्तुतः वेद के रूपकों के ही आधार पर पौराणिक कथा–साहित्य का निर्माण हुआ है।''[2] इस कथा–साहित्य में मूर्तिपूजा, सर्वेश्वरवाद, भक्ति–दर्शन, उत्सव, आचार–व्यवहार इत्यादि के विषय में विविध मूल्यों की अभिव्यक्ति हुई है। राजा हरिश्चन्द्र नचिकेता, याज्ञवल्क्य और मैत्रेयी आदि की कहानियाँ पुराणों में मिलती हैं। इनमें पातिव्रत धर्म, सत्य की महिमा, नारी की महत्ता, दान, सेवा आदि से संबंधित विशिष्ट भावनाओं की व्यंजना है। वैदिक साहित्य में मूल्याभिव्यक्ति विषयक ये कतिपय संकेत हैं।

[1] सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग् भवेत।।

[2] डॉ. मुंशीराम शर्मा : वैदिक कहानियाँ, पृ. 266